thearyasamaj.org

आर.एन.आई. रजि० नं० HRHIN/2003/10425 सृष्टि संवत् 1960853115
डाक पंजीकरण संख्या : P/RTK/10/2013-15 विक्रम संवत् 2071
दयानन्दाब्द 191

॥ ओ३म् ॥

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का साप्ताहिक मुखपत्र
E-mail : aryapsharyana@gmail.com दूरभाष : 01262-216222 सम्पादक : मा० रामपाल आर्य
विदेश में वार्षिक शुल्क : 75 डॉलर विदेश में आजीवन शुल्क : 300 डॉलर
वर्ष : 11 अंक : 31 रोहतक, 14 जनवरी, 2015 वार्षिक शुल्क : 150/- आजीवन 1500/-

सत्यार्थप्रकाश में भूगोल ज्ञान

❑ देशराज आर्य, सेवानिवृत प्रधानाचार्य, म०नं० 725, सै०-4, रेवाड़ी

महर्षि दयानन्द ने मानव जीवन से सम्बन्धित समस्त प्रकार के लोक-व्यावहारिक सत्य ज्ञान का उल्लेख अपने सभी ग्रन्थों में बड़े सरल एवं प्रामाणिक रूप में किया है। अनेक जटिल प्रश्नों के उत्तर अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में वेद का दृष्टान्त देकर दिये हैं। सत्यार्थ प्रकाश के चौदह समुल्लासों में कहीं सार रूप में तो कहीं विस्तार रूप में विशद वर्णन किया है। विशेष रूप से ज्ञान-विज्ञान और भूगोल विषय में अनेक शंकाओं का समाधान सहज एवं सटीक किया है। दूसरे ग्रह-नक्षत्रों पर मानव जीवन सम्बन्धी जानकारी तथा वहाँ के निवासियों की शक्ल सूरत के विषय में भी शंका-समाधान किया है। सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास के अन्त में आकाशादि ग्रहों की व्याख्या की है। सत्यनोत्तभिता भूमिः ऋग्वेद का वचन है, जो त्रैकालया बाध्य जिसका कभी नाश नहीं होता उस परमेश्वर ने भूमि, आदित्य और सब लोकों को धारण किया है। वर्षा द्वारा भूगोल (पृथ्वी) के सेचन करने से सूर्य का नाम और सूर्य ने ही अपने आकर्षण से पृथ्वी को धारण किया है तथा सूर्यादि को धारण करने वाला परमेश्वर ही है। ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। सब लोक-लोकान्तरों को धारण करने वाला वही है। जिस प्रकार आकाश के सामने बड़े-बड़े भूगोल तथा समुद्र के सामने जल के छोटे कण तुल्य नहीं उसी प्रकार अनन्त परमेश्वर के सामने असंख्यात लोक भी एक परमाणु कण के तुल्य नहीं। वह परमात्मा सब प्रजाओं में व्यापक होकर सबका धारण कर रहा है। सदाधार पृथिवीमुत द्याम्। यजु० अर्थात् पृथिव्यादि प्रकाश रहित लोक-लोकान्तर पदार्थ तथा सूर्यादि प्रकाश सहित लोक और पदार्थों का रचन व

धारण परमात्मा करता है। यहाँ पृथिवी को प्रकाश रहित और सूर्य को प्रकाश सहित होना भी बताया है।

जिस प्रकार यह भूगोल (पृथ्वी) जल सहित सूर्य के चारों ओर घूमती है उसी प्रकार सविता (सूर्य) भी अपनी परिधि में घूमता रहता है किन्तु लोक-लोकान्तरों के चारों ओर नहीं घूमता। सूर्य प्रकाशक है तथा दूसरे लोक-लोकान्तर प्रकाश्य हैं। चन्द्रलोक तथा पृथ्वी आदि लोक सब सूर्य के प्रकाश से ही प्रकाशित हैं। रात व दिन सदा बने रहते हैं क्योंकि पृथिव्यादि लोक घूमकर जितना भाग सूर्य के सामने आता है उतने में दिन और जितना भाग सूर्य की आड़ में हो जाता है उतने में रात होती है। अर्थात् उदय, अस्त, सन्ध्या, मध्याह्न, मध्यरात्रि आदि जितने काल अवयव हैं देश-देशान्तरों में बने रहते हैं। जैसे आर्यावर्त में सूर्योदय होता है तो उस समय पाताल देश (अमेरिका) में अस्त होता है और जब आर्यावर्त में अस्त होता है तो पाताल देश में उदय होता है। सूर्य का पृथ्वी के सामने घूमना उसी प्रकार है जैसे राई के सामने पहाड़ का घूमना अतः मालूम नहीं पड़ता तथा समय भी बहुत लगता है और यदि सूर्य नहीं घूमता तो एक राशि स्थान से दूसरी राशि स्थान को प्राप्त न होता। गुरु पदार्थ विद्या घूमे आकाश में नियत स्थान पर कभी नहीं रह सकते। सूर्य का नाम (ब्रह्म) पृथ्वी से लाख गुना बड़ा और करोड़ों कोसों दूर है। अनेक चन्द्र अनेक भूमियों के मध्य एक सूर्य रहता है तथा समस्त लोकान्तरों को प्रकाशित करता है।

महर्षि ने यह भी स्पष्ट किया है कि 33 देवताओं में से आठ, पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्र, नक्षत्र और सूर्य वसु कहलाते हैं। इनका नाम वसु इसलिए है कि इन्हीं में सब पदार्थ और प्रजा बसती है और ये ही सबको बसाते हैं। वास के निवास करने के घर हैं इसलिए इनका नाम वसु है। पृथिवी की भांति इन पर भी इसी प्रकार की प्रजा रहती है। परमेश्वर का यह छोटा-सा लोक मनुष्यादि सृष्टि से भरा हुआ है तो ये सब लोक शून्य कैसे होंगे।

परमात्मा का कोई भी काम निष्प्रयोजन नहीं होता अतः इन सभी वसुओं पर सर्वत्र मनुष्यादि सृष्टि है। हाँ कुछ-कुछ आकृति में भेद होना सम्भव है। जिस प्रकार चीन, दक्षिणी अफ्रीका, यूरोप व भारतीयों में अवयव और रंगरूप आकृति में थोड़ा-थोड़ा भेद होता है इसी प्रकार अन्य दूसरे लोक-लोकान्तरों में भी भेद होते हैं। परन्तु जिस जाति की जैसी सृष्टि इस देश में है वैसी जाति ही की सृष्टि अन्य लोकों में भी है। जिस प्रकार शरीर में आंख, नाक, कान आदि हैं उसी प्रकार लोकान्तर में भी उसी जाति के होते हैं। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। ऋ० विशेष पदार्थ पूर्व कल्प में रचे थे वैसे ही इस कल्प अर्थात् इस सृष्टि में रचे हैं तथा सब लोक-लोकान्तरों में भी बनाये गये हैं। भेद किंचित् मात्र नहीं होता।

वर्तमान कल्पना विज्ञान द्वारा ऐलियन नामक जीव को दूसरे ग्रहों का वासी बताया गया है जिसकी शक्ल सूरत मानव जैसी नहीं है। उसकी बनावट मनुष्य आकृति से मेल नहीं खाती। चेहरे के अवयव बिल्कुल अलग तरह के हैं। हाथों में तीन उंगलियां, पैरों की बनावट, सिर पर बाल नहीं होना जैसी अनेक भिन्नताएं हैं, पंजों का पीठ की तरफ होना सब कल्पना मात्र है। अंग्रेजी शब्दकोष में Cannibal कैनीबाल एक शब्द है जिसका अर्थ नरभक्षी (मनुष्य का मांस खाने वाला) होता है, जो दक्षिणी अफ्रीका के जंगलों में रहते हैं जिनका मुंह व आँखें छाती में ही होती हैं, गरदन नहीं होती। यह पात्र भी काल्पनिक है ऐसा कोई मनुष्य हो ही नहीं सकता। अतः सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानन्द ने स्पष्ट उल्लेख किया है कि दूसरे अन्य ग्रहों पर रहने वाले मनुष्यों में थोड़ी भिन्नता संभव है तथा वे सब मानव जैसे ही होते हैं। अंग्रेजी के एक लेखक जोनाथन स्वीफ्ट द्वारा लिखित पुस्तक 'गुलिवर्स ट्रेवल' में सिसीपुट की एक यात्रा में जहाँ बलिश्त (10 इंच) के लगभग मानव का जिक्र किया है वहीं दूसरी यात्रा में वह स्वयं ऐसे मनुष्यों के पास होता है जहां वह स्वयं उनकी बलिश्त के बराबर होता है। यह काल्पनिक कथा है इसे फिक्शन कहते हैं। कुछ ऐसे कल्पित पात्र हैं जो लम्बे समय से साहित्य में प्रचलित हैं जिन्हें कुछ लोग वास्तविक मान लेते हैं। हकीकत में ऐसे मानव नहीं होते। इन सब शंकाओं का उत्तर भी मिल जाता है।

महर्षि दयानन्द ने अन्य लोकों में भी वेद का प्रकाश होना बताया है। जिस प्रकार एक राजा की राज्य व्यवस्था नीति सब देशों में समान होती है उसी प्रकार परमात्मा राजराजेश्वर की वेदोक्त नीति अपने सृष्टि रूप सब राज्य में एकसी है। अतः उक्त तथ्यों से यह शंका समाप्त हो जाती है। अन्य ग्रहों पर भी सृष्टि है वहां भी वेदज्ञान है तथा उनका सबका स्वामी भी एक ही निराकार सर्वशक्तिमान् ईश्वर है।

thearyasamaj.org

तिलक, कण्ठी, रुद्राक्ष व मौली धारण करना अशास्त्रीय

❑ इन्द्रजित्देव, चूना भट्ठियां, सिटी सेंटर के निकट, यमुनानगर मो० : 09466123677

''युगल किशोर ने जब महागुरु जी से जाकर कहा—'महाराज! आपने दयानन्द को विद्या देकर सांप को दूध पिलाया है। वह कण्ठी व तिलक का खण्डन करता फिरता है।' यह सुनकर रुष्टमना विरजानन्द ने पूछा—'क्या तुम सत्य कह रहे हो? तुम्हें यह वृत्तान्त किसने बताया है?' युगल किशोर बोले—'और कौन बताएगा? स्वयं मेरे साथ वार्तालाप के प्रसंग में दयानन्द ने इनका खण्डन किया है।' आचार्य और उल्लसित होकर कहने लगे—'युगल किशोर! इस शुभ संवाद को सुनाने के लिए भूरि-भूरि साधुवाद।''

यह प्रसंग आर्यसमाज के यशस्वी विद्वान् लेखक स्वामी वेदानन्द सरस्वती (दयानन्द तीर्थ) द्वारा रचित पुस्तक ''**सर्वविध क्रान्ति के प्रवर्त्तक महर्षि स्वामी विरजानन्द सरस्वती का जीवन चरित**'' के 1911 में प्रकाशित संस्करण के पृष्ठ 142 पर आप देख सकते हैं। युगल किशोर गुरु विरजानन्द जी के शिष्य व महर्षि दयानन्द सरस्वती के मथुरा में अध्ययनकाल के सहपाठी थे। शेष बातें आप सहज ही समझ सकते हैं। इसी प्रकार की एक अन्य घटना डॉ० रामप्रकाश द्वारा लिखित ''**गुरु विरजानन्द दण्डी-जीवन एवं दर्शन**'' में पृष्ठ 72 पर लिखी है। उसके ये शब्द भी विचारणीय हैं—''स्वामी दयानन्द शाम के समय प्राय: संस्कृत में बातचीत करते थे। वे देर रात तक पढ़ते थे। वार्तालाप में वैष्णवों की कण्ठी व तिलकादि को निषिद्ध बताते थे। .....उनके इन विचारों को स्वामी विरजानन्द का पूर्ण समर्थन मिला।''

उन दो प्रमाणों से आप सहज ही समझ सकते हैं कि गुरु विरजानन्द व महर्षि दयानन्द कण्ठी एवं तिलक धारण करने के विरोधी थे परन्तु आर्यसमाज में आज इनके विचारों के विरोधी लोग कण्ठी व तिलक को धारण करने के पक्ष में बात करते हैं। कुछ कण्ठी, तिलक व मौली धारण के पक्ष में अपने लेख भी लिखते हैं। ऐसे लेखक तिलकादि धारण करने के पक्ष में कोई वैदिक प्रमाण नहीं देते अपितु ''ऐसा कहा जाता है, ऐसा सुना जाता है या लोगों का विचार है'' ऐसी शब्दावली प्रयोग करके प्रमाण देने की अपनी जिम्मेदारी से बच गये। अनुभव करके पौराणिक मान्यताओं की स्थापना करने का प्रयास करते हैं।

ऊपर महर्षि दयानन्द के मथुरा में अध्ययनकाल के दो प्रमाण उद्धृत करने के उपरान्त हम महर्षि दयानन्द जी के साहित्य से भी कुछ प्रमाण देकर तिलकादि के धारण करने सम्बन्धी महर्षि के विचारों का उल्लेख करते हैं—''एक कथा भक्तमाल में लिखी है—कोई एक मनुष्य वृक्ष के नीचे सोता था। सोता-सोता ही मर गया। ऊपर से काक ने विष्ठा कर दी। वह ललाट पर तिलकाकार हो गई थी। वहाँ यम के दूत उसको लेने आये। इतने में विष्णु के दूत भी पहुँच गये। दोनों विवाद करते थे कि यह हमारे स्वामी की आज्ञा है, वैकुण्ठ में ले जाने की। देखो! इसके ललाट में वैष्णवी तिलक है। तुम कैसे ले जाओगे? तब यम के दूत चुप करके चले गये। विष्णु के दूत सुख से उसे वैकुण्ठ में ले गये। उनको वैकुण्ठ में रखा।''

देखो! जब तिलक का इतना महात्म्य है, तो जो अपनी प्रीति और हाथ से तिलक करते हैं, वे नरक से छूट वैकुण्ठ में जावे, तो इसमें क्या आश्चर्य है?

''हम पूछते हैं कि जब छोटे-से तिलक के करने से वैकुण्ठ में जावें, तो सब मुख के ऊपर लेपन करने वा काला मुख करने, पूरे शरीर पर लेपन करने से वैकुण्ठ से भी आगे सिधार जाते हैं वा नहीं? इससे ये बातें सब व्यर्थ हैं।'' (सत्यार्थ प्रकाश, एकादश समुल्लास)

सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में ही रुद्राक्ष-धारण के तथाकथित महत्त्व का विरोध भी पाठकों को मिल सकता है। इसी प्रकार इसी समुल्लास में चक्रांकित लोगों के विषय में महर्षि दयानन्द लिखते हैं—''**शठकोष योगी सूप को बनाकर बेचता फिरता था। अर्थात् कंजर जाति में उत्पन्न हुआ था। जब उसने ब्राह्मणों से पढ़ना व सुनना चाहा होगा, तब ब्राह्मणों ने तिरस्कार किया होगा। उसने ब्राह्मणों के विरुद्ध सम्प्रदायी तिलक चक्रांकित आदि शास्त्रविरुद्ध मनमानी बातें चलाई होंगी।**''

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित एक अन्य ग्रन्थ '**वेदविरुद्ध-खण्डनम्**' के आधार पर हम और प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। यह लघु ग्रन्थ संस्कृत में लिखा गया था परन्तु इसका आर्यभाषा अनुवाद भी वहीं उपलब्ध है। इसमें प्रसंग इस प्रकार है—

प्रश्न-कण्ठीतिलकधारणे मूर्तिपूजने च पुण्यं भवत्युतापुण्यम्?

उत्तर-पुण्यं भवति, न च पापमिति ब्रूम:। स्वल्पकण्ठीतिलकधारणे मूर्तिपूजने च पुण्यं भवति चेत् तर्हि कण्ठीधारणे [चन्दनेन] सर्वमुखशरीरलेपने पृथिवी पर्वतपूजने च महत्पुण्यं भवतीति मन्यताम् क्रियाताञ्च। तत्र वेदविधिप्रतिष्ठाया अभावान्न क्रियते इति जल्पाम:। वेदेषु तु खलु कण्ठीतिलकधारणस्थ पाषाणमूर्तिपूजनस्य च लेशमात्रोऽपि विधि: प्रतिष्ठा च न दृश्यते। अतो भवत्कथनं व्यर्थमेव।

इसका आर्यभाषा (हिन्दी) में अनुवाद इस प्रकार दिया है—

प्रश्न-कण्ठी तथा तिलक धारण और मूर्ति के पूजने में पुण्य होता है, वा अपुण्य?

उत्तर-'पुण्य होता है, पाप नहीं' ऐसा कहते हो, सो ठीक नहीं, क्योंकि यदि थोड़े कण्ठी तथा तिलक को धारण और मूर्तिपूजन में पुण्य होता है, तो बहुत कण्ठियों का भार लादने से सब मुख व शरीर के लेपन करने तथा सम्पूर्ण पृथिवी और पर्वतों के पूजन में बड़ा पुण्य होता है, ऐसा माना और करो। यदि कहो कि पृथ्वी और पहाड़ के पूजने के लिए वेद में प्रतिष्ठा का विधान न होने से नहीं करते, तो वेदों में कण्ठी, तिलक धारण और पाषाण मूर्तिपूजन का लेशमात्र भी विधान नहीं और न प्रतिष्ठा का कहीं नाम है। इसलिए आपका कथन व्यर्थ है।

''**भागवत-खण्डनम्**'' भी महर्षि दयानन्द का एक लघु ग्रन्थ है। इसका निम्नलिखित वर्णन भी हमारे मन्तव्य का समर्थन करता है—

ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णा:, ब्रह्मचारिगृहिवनि-संन्यासिन आश्रमाश्च ज्ञातव्या:। ऐषां वेदेषु मनुस्मृतो च धर्मा उक्ता:। एभ्यो ये विरोधिनस्ते पाषण्डिना एव। किंलक्षणास्ते? चक्राद्यङ्कनकेवलोर्ध्वपुण्यकाष्ठमाला-धारणि:। तप्तमुद्रोर्ध्वपुण्ड्रे द्वे नरकवाससाधने। तस्मात् त्याज्यमनघैर्द्विजैर्नरकभीरुभिरिति जाबालि:—

विभूतिधारणं त्यक्त्वा त्यक्त्वा रुद्राक्षधारणम्।
मा मा पूजय विश्वेशं शिवलिंगरूपिणम्॥

अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, ये चार वर्ण व ब्रह्मचारी गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासी-ये चार आश्रम जानने चाहिएं। इनके धर्म वेदों व मनुस्मृति में कहे गए हैं। उनसे जो विपरीत हैं, वे पाखण्डी ही हैं। उनके क्या लक्षण? चक्रादि से शरीर के दागने, ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक और काठ (=तुलसी आदि) की माला धारण करने वाले। गरम चक्र आदि से मुद्रा करना (=दागना) और ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक लगाना नरक-गमन के साधन हैं। इसलिए ये त्याज्य हैं, नरक से डरने वाले श्रेष्ठ जनों द्वारा।

''विभूति का धारण छोड़कर मुझ शिवलिंगरूपी विश्वेश की पूजा मत कर।''

मौली की प्रथा शास्त्रीय नहीं है। इसकी व्यवस्था आप वेदों अथवा गृह्यसूत्रों में तलाश करेंगे, तो आपको यह नहीं मिलेगी। मौली बन्धना वैदिक कालीन नहीं है, मध्यकालीन है। यहाँ तक कि कुम्भ को भी मौली बांधी जाने लगी है। यज्ञ कर्म में यह वाञ्छनीय भी नहीं है।

जब महिलाओं व पुरुषों पर विदेशी-विधर्मी राजाओं द्वारा अत्याचार होने लगे, तो मौली बांधने की परम्परा आरम्भ हुई। राखी के रूप में बहनें अपने भाइयों को स्वकीय रक्षार्थ बांधने लगीं। मुसलमान शासकों द्वारा यज्ञोपवीत उतरवाए जाने लगे, सिर कटवाए जाने लगे तो यज्ञोपवीत का रूप व रंग बदलकर पुरुषों ने हाथ पर धारण कर लिया। परिवर्तित रूप में यज्ञोपवीत भी है मौली। विज्ञजन जानते हैं कि यज्ञोपवीत का एक नाम व्रतबन्ध भी है। इसे पहनने वाला व्रतधारी बनता है। मौली धारण करने वाले भाई बहन की रक्षा का व्रत लेते हैं। आज जब किसी विधर्मी-विदेशी का राज नहीं है तो यज्ञोपवीत पर संकट भी नहीं है। हमें इसे ही धारण करना चाहिए।

अन्त में निवेदन है कि कर्मकाण्ड सम्बन्धी सभी कार्यों में उनके शास्त्रीय, वैज्ञानिक, बौद्धिक, तथा तार्किक समाधान आपके पास होने चाहिएं न कि ऐसा कहा जाता है, ऐसा माना जाता है, इसीलिए हमें भी मानना चाहिए।

thearyasamaj.org

* ओ३म् *

पञ्चायतन पूजा

-: वेद-मन्त्र :-

अर्चत प्रार्चता नरः प्रियमेधासो अर्चत।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरमिद् धृष्ण्वर्चत॥ 3॥ 362॥ (सामवेद)

प्रस्तुत मन्त्र में गत मंत्र के मुक्तात्मा के बनने के साधन का उल्लेख है। 'अर्च पूजायाम्' धातु से बनी क्रिया का इस मन्त्र में 5 बार प्रयोग उस पूजा का संकेत कर रहा है। [नरः] = ऐ आगे बढ़ने की वृत्तिवाले व्यक्तियो! [प्रियमेधासः] = जिन्हें बुद्धि प्रिय है ऐसे व्यक्तियों! [अर्चत] = पूजा करो। पूजा का क्रम निम्न है—

(1) [अर्चत] = पूजा करो, आदर करो। **'मातृदेवोभव'** इस उपनिषद् वाक्य को अपने जीवन में मूर्तरूप दो। यदि दौर्भाग्यवश माता उत्तम शिक्षित न हो अथवा पुत्र माता का कहना मानने वाला न हो तो उसके मौलिक चरित्र में ही कुछ कमी रह जाती है। चरित्र का निर्माण मातृकृपा से ही होता है।

(2) [प्रार्चता] = खूब आदर करो। पिताजी जिस प्रकार निर्देश क रें उसी प्रकार सभा-समाजों में अपने उठने-बैठने का ध्यान करो। इन निर्देशों की अवहेलना से हम अपने जीवनों में शिष्ट न बन पायेंगे। हम कुछ ill-mannered (अशिष्ट) से अभद्र से बने रहेंगे। **क्रमशः**

आदर्श व्यक्तित्व ब्र० राजसिंह आर्य का निधन

आर्यजगत् के महान् विद्वान् एवं युवा नेता तथा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व प्रधान ब्र० राजसिंह आर्य के निधन का समाचार सुनकर पूरा आर्यजगत् स्तब्ध रह गया। ब्र० राजसिंह का निधन सोमवार को हृदयगति रुकने के कारण राममनोहर लोहिया अस्पताल में दोपहर लगभग 12.30 बजे हो गया।

आचार्य राजसिंह उच्चकोटि के विद्वान् तथा कुशल वक्ता के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जाने जाते थे। आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा द्वारा आयोजित मासिक सत्संग 4 जनवरी 2015 को आप मुख्यवक्ता के रूप में आत्मा और परमात्मा विषय पर अपने ओजस्वी विचार रखे। आपकी यज्ञ करवाने की वैज्ञानिक पद्धति से हजारों लोगों ने अपनाकर दैनिक यज्ञ करने के संकल्प लेते रहे हैं। आपने आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के प्रधान पद को सुशोभित करते हुए आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों को देश और विदेशों में आयोजित किये और स्वामी दयानन्द के सन्देश को जन-जन तक पहुँचाया।

आचार्य जी युवा संगठन सार्वदेशिक आर्य वीर दल के सर्वमान्य नेता रहे। आपके कुशल नेतृत्व में दिल्ली में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय आर्य वीर महासम्मेलन आर्यसमाज के इतिहास में नई कड़ी जोड़ गये। आप युवकों के प्रेरणास्रोत थे। आपने अनेक आर्य वीर प्रशिक्षण शिविर लगाकर युवाशक्ति को आर्यसमाज से जोड़ा। आपके निधन से आर्यजगत् को जो क्षति हुई उसे भरना अति कठिन होगा।

आचार्य जी की अन्तिम श्रद्धांजलि देने के लिए पूरा आर्यसमाज उमड़ पड़ा। आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा की ओर से पूर्व मन्त्री श्री सत्यवीर शास्त्री, मा० जिलेसिंह, श्री राजवीर छिक्कारा, प्रो० ओमकुमार आर्य, श्री अभय आर्य, श्री कन्हैयालाल आर्य, तथा आर्य वीर दल हरयाणा के संचालक श्री उमेदसिंह शर्मा, महामन्त्री श्री वेदप्रकाश आर्य, कोषाध्यक्ष कर्णसिंह आर्य ने निगम्य बोध घाट पर श्रद्धांजलि अर्पित की। इसके अतिरिक्त दिल्ली की समस्त आर्यसमाजें, राजनैतिक नेताओं, गुरुकुलों के आचार्यों तथा हजारों आर्यजनों ने अपने प्रियनेता को श्रद्धासुमन अर्पित किये।

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के प्रधान आचार्य विजयपाल जी महामन्त्री मा० रामपाल आर्य, आचार्य योगेन्द्र आर्य, आचार्य सर्वमित्र सहित समस्त स्टाफ आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा ने दयानन्दमठ रोहतक में दो मिनट का शोक रखकर श्रद्धांजलि अर्पित की।

—वेदप्रकाश आर्य, महामंत्री आर्य वीर दल हरियाणा

वेद में आत्म-चिन्तन

❑ स्वामी वेदरक्षानन्द सरस्वती, संरक्षक-आर्ष गुरुकुल कालवा

आत्मा क्या है? उसका न कोई रंग है, न रूप, न ही कोई लिंग है। वह जैसा शरीर धारण कर लेता है, वैसा ही कहा और पुकारा जाता है। जब आत्मा का संयोग पुरुष-शरीर के साथ हो जाता है तो उसे पुरुष कहकर सम्बोधित किया जाता है। जब आत्मा स्त्री शरीर में प्रविष्ट हो जाता है तो स्त्री कहकर पुकारा जाता है। इसी प्रकार अवस्था के अनुसार उसे कुमार अथवा कुमारी कहा जाता है। जब मनुष्य बूढ़ा होकर दण्ड लेकर चलता है तो उसे वृद्ध कहते हैं। जीवात्मा जैसा कर्म करता है वैसा फल भोगता है। पाप-कर्म करने पर जीवात्मा अत्यन्त निकृष्ट कीट-पतंग आदि योनियों में जाता है और पुण्य कर्म करने पर अत्यन्त उत्कृष्ट मानव देह को प्राप्त करता है। जीवात्मा अविनाशी है परन्तु यह विनाशी शरीर के साथ रहता है। जीवात्मा और शरीर विरुद्ध गति वाले हैं—आत्मा चेतन है और शरीर जड़ है। आत्मा का शरीर के साथ संयोग और वियोग रहता है। संयोग का नाम जन्म और वियोग का नाम मृत्यु है। संसारी जन इन दोनों में से शरीर को तो खूब जानते हैं परन्तु आत्मा को नहीं जानते हैं। हे संसार के लोगो! आध्यात्मिक पथ के पथिक बनकर आत्मा को जानने का प्रयत्न करो। पाठक! क्या आपने संसार में ऐसा अद्भुत वृषभ=बैल देखा है? यदि नहीं तो आइए, इसके दर्शन करायें। वर्षणशील होने के कारण अथवा वीर्यवान्=पराक्रमी होने के कारण आत्मा ही वृषभ है। मन्त्र में इसी वर्षणशील आत्मा का वर्णन है—

स्वामी वेदरक्षानन्द जी

चत्वादि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवा मर्त्यां आ विवेश॥ (ऋग्वेद 4/58/3)

शब्दार्थ-एक वृषभ है (अस्य) इसके (चत्वारि शृङ्गाः) चार सींग हैं (त्रयः पादाः) तीन पैर हैं (द्वे शीर्षे) दो सिर हैं और (अस्य) इसके (सप्तहस्तासः) सात हाथ हैं (त्रिधा बद्धः) तीन प्रकार से बन्धा हुआ है। वह (वृषभः) वृषभ (रोरवीति) रोता है। वह (महः देवः) महादेव (मर्त्यान् आ विवेश) मनुष्यों में प्रविष्ट है।

मन्त्रानुसार आत्मा के मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इसके चार सींग हैं। भूत, वर्तमान और भविष्यत्-इसके तीन पैर हैं। ज्ञान और प्रयत्न-ये दोनों सिर हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियां, मन और बुद्धि अथवा सप्त प्राण-सात हाथ हैं। सत्त्व, रज और तमरूपी तीन पाशों से यह बंधा हुआ है। इन पाशों में, बन्धनों में बन्धा होने के कारण वह रोता और चिल्लाता है। यह महादेव मरणधर्मा शरीरों में प्रविष्ट हुआ करता है। यह आत्मा इस शरीर-बन्धन से मुक्त कैसे हो? वेद ने इसके छुटकारे का उपाय भी बता दिया है। वह यह है कि मनुष्य अपने स्वरूप को समझे। वह महादेव है, इन्द्रियों का अधिष्ठाता है, स्वामी है। इन्द्रियों के दास न बनकर स्वामी बनो तो त्रिगुणों से त्राण पाकर मोक्ष के अधिकारी बन जाओगे। आत्मोद्धार के साधन—

त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्यर्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन्।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद् द्यावापृथिवी पर्यपश्यत्॥ (ऋग्वेद 3/26/8)

शब्दार्थ-(हृदा) हृदय से (मतिम्) ज्ञान तथा (ज्योतिः) प्रकाश को (अनु प्रजानन्) उत्तमता पूर्वक प्रकट करता हुआ (त्रिभिः) तीन (पवित्रैः) पवित्र कारक साधनों से (हि) निस्संदेह (अर्कम्) पूजनीय आत्मा को (अपुपोत्) निरन्तर पवित्र करता है। (स्वधाभिः) अपनी शक्तियों से (वषिष्ठम्) सर्वश्रेष्ठ (रत्नम्) आत्मरूपी रत्न को (अकृत) बनाता है। (आत् इत्) तत्पश्चात् वह (द्यावापृथिवी) समस्त संसार को (परि अपश्यत्) तिरस्कार पूर्ण दृष्टि से देखता है।

मन्त्र का भाव यह है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने आत्मा का उद्धार करना ही चाहिये। इस मन्त्र में आत्मोद्धार के साधनों का वर्णन है—(1) मनुष्य अपने हृदय से ज्ञान-ज्योति को उत्तमता से प्रकट करे। ज्ञान से कर्म होता है और ज्ञानपूर्वक कर्म करने का नाम ही उपासना है। (2) ज्ञान, कर्म और उपासना इन तीनों साधनों से आत्मा पवित्र होता है। (3) यह आत्मारूपी रत्न ऐसे ही पवित्र नहीं हो जाता, इस रत्न को बनाने के लिए स्वधा=शक्ति लगानी पड़ती है। पुरुषार्थ करना पड़ता है, जी-जान से जुटना पड़ता है। (4) जब मनुष्य आत्मरूपी रत्न को पा लेता है तब इसके समक्ष उसे संसार के सभी पदार्थ हेय और तुच्छ दीखते हैं जैसे हीरा पाने वाले को मिट्टी का ढेला हेय लगता है। आओ! इस आत्मरूपी रत्न को पाने का प्रयत्न करें।

thearyasamaj.org

ईश्वर की उपासना क्यों करें, करें या न करें?

❑ मनमोहन कुमार आर्य

हमें मनुष्य जन्म हमारे माता-पिता से मिला है। माता-पिता चाहते हैं कि हमारी सन्तानें हमारे अनुकूल हों और हमारी सेवा करें जिससे हमें सुख की अनुभूति हो। यह बात अपनी जगह पूर्णतया ठीक है। परन्तु क्या सन्तान को केवल माता-पिता की सेवा ही करनी चाहिये या ईश्वर के प्रति भी उसका कुछ कर्तव्य है, इस पर प्रत्येक व्यक्ति को पूरी गम्भीरता व सिद्दत से विचार करना चाहिये।

माता-पिता सन्तान को जन्म देते हैं और उसका पालन-पोषण कर उसका शारीरिक, बौद्धिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति करते हैं। इसमें आचार्यों व उनके विद्वानों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। सन्तानें शिक्षा समाप्त कर युवावस्था में धनोपार्जन करने में समर्थ हो जाती हैं। उनका विवाह कर दिया जाता है और इसके बाद माता-पिता अपने पौत्र-पौत्रियों की इच्छा करते हैं। सन्तान धनोपार्जन करती है जिस पर परिवार के सभी सदस्यों का अधिकार है। माता-पिता ने जन्म दिया व सन्तानों का पालन-पोषण किया है जब कि वह असहाय अवस्था में थे। वृद्धावस्था में माता-पिता असहाय हो जाते हैं। उन्हें अपने पुत्र वा पुत्रों से वृद्धावस्था में भोजन, रोगोपचार, वस्त्र, मान-सम्मान तथा रक्षा व सुरक्षा आदि की अपेक्षा व आवश्यकता होती है। पुत्रों का यह कर्तव्य है कि वह अपने परिवार, माता-पिता, पत्नी व सन्तानों की आवश्यकताओं की अपनी आय के साथ सन्तुलन बनाकर उनकी पूर्ति करें। जो सन्तान माता-पिता की तन-मन-धन से सेवा करते हैं, उन्हें माता-पिता का आशीर्वाद प्राप्त होता है जिससे उनकी भौतिक उन्नति के साथ शारीरिक व आध्यात्मिक उन्नति तथा आर्थिक सुख-समृद्धि होती है।

अब यह विचार करना है कि क्या ईश्वर के प्रति भी सन्तानों वा मनुष्यों का कोई कर्तव्य होता है या नहीं? ईश्वर ने यह सारा संसार हम सबके लिए बनाया है जिसमें हमारा सूर्य व इसके पृथिवी आदि अनेक गृह-उपग्रह हैं। पृथिवी को रत्नगर्भा भी कहते हैं। उसमें अन्न से लेकर, स्वर्ण व रत्नों आदि की रचना परमात्मा ने ही की है जिससे मनुष्य आदि प्राणियों को सुख प्राप्त हो सके। वस्तुत: हम माता-पिता से उत्पन्न होते वा जन्म लेते हैं परन्तु हमारी आत्मा को माता के गर्भ में भेजता परमात्मा है और सन्तानों के शरीरों को माता के गर्भ में रचना भी परमात्मा ही करता है। इसका कारण यह है कि यदि कोई माता-पिता चाहें तो भी वह अपने पुत्री या पुत्र का शरीर नहीं बना सकते। यद्यपि सन्तान का पालन-पोषण माता-पिता करते हैं, परन्तु माता-पिता तो केवल माध्यम होते हैं, उन्हें उनके अन्दर गुप्त व लुप्त रूप से सन्तान का पालन व पोषण करने की शक्ति व सामर्थ्य तो परमात्मा ही प्रदान करता है। इससे सिद्ध होता है कि परमात्मा का भी सभी मनुष्यों और प्राणियों पर ऋण है जिसके लिए उन्हें ईश्वर के प्रति सदैव कृतज्ञ होना है। यह कृतज्ञता किस प्रकार से प्रदर्शित की जाए, इसी का नाम स्तुति, प्रार्थना और उपासना है।

मनमोहन कुमार आर्य

स्तुति कहते हैं कि हमें ईश्वर के गुणों का वर्णन करना है। इसके साथ ही ईश्वर के उपकारों का स्मरण करना भी कुछ-कुछ स्तुति-प्रार्थना-उपासना के अन्तर्गत आता है। प्रार्थना में हम ईश्वर से अपने लिए कुछ मांगते हैं। जैसे ईश्वर हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में चलने की प्रेरणा दें। ईश्वर हमारे दुर्गुण, दु:खों व दुर्व्यसनों को दूर करे और जो कल्याणकारी गुण-कर्म-स्वभाव व पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कराये। उपासना में ईश्वर के उपकारों को स्मरण करने व स्तुति-प्रार्थना करने के लिए सुखासन, पद्मासन आदि किसी आसन में बैठकर इसे पूरा करना होता है। यह काम भली प्रकार सम्पादित हो इसके लिए यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान और समाधि का अपने जीवन में धारण व पालन करना आवश्यक व लाभदायक होता है। यम अंहिसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न कराना या छिपा कर कोई काम न करना), ब्रह्मचर्य अर्थात् पूर्ण संयम पूर्वक जीवन व्यतीत करना और अपरिग्रह अर्थात् आवश्यकता से अधिक धन आदि पदार्थों का संग्रह न करने को कहते हैं। नियम शौच (आन्तरिक मन आदि इन्द्रियों की व बाह्य शरीर की स्वच्छता), सन्तोष, तप (धर्माचार में कष्ट सहन करने का नाम है), स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान (ईश्वर का ध्यान व चिन्तन व उसकी व्यवस्था में पूर्ण विश्वास) को कहते हैं। इन यम-नियमों के पालन से उपासना आदि की भूमि तैयार होती है। यम-नियमों का पालन करने वाला कोई व्यसन नहीं करता अर्थात् मद्यपान, धूम्रपान, नशा, सामिष भोजन, अधिक तड़क-भड़क वाला जीवन व्यतीत नहीं करता। इसके अतिरिक्त योगासन व प्राणायाम के द्वारा शरीर को निरोग व स्वस्थ बनाकर रखना होता है जो कि उपासना के लिए आवश्यक है। इसके बाद प्रत्याहार व धारणा की पांचवी व छठीं पादानें हैं तथा अन्त में ध्यान व समाधि का अभ्यास करना है जिसमें किसी गुरु की सहायता ली जा सकती या स्वाध्याय के ग्रन्थों से इन्हें जानकर किसी अनुभवी व्यक्ति का सान्निध्य व मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिये। यह भी ध्यातव्य है कि हमारा आचरण शुद्ध व पवित्र होना चाहिये। ऐसा करने से हम ईश्वर के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करते हैं और उसके ऋणों से आंशिक रूप से अनृण होते हैं।

जितना आवश्यक धनोपार्जन व भोजन आदि साधनों की प्राप्ति का करना है, उतना ही आवश्यक माता-पिता व परिवार के सदस्यों का सम्यक पालन करना और ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना व उपासना करना भी है। इस विषय में और अधिक जानने के लिए सत्यार्थ प्रकाश, पंचमहायज्ञ विधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कार विधि तथा उपनिषद व दर्शन, मुख्यत: योगदर्शन आदि ग्रन्थों सहित वेदों का स्वाध्याय व अध्ययन करना चाहिये। इस अध्ययन व स्वाध्याय से हम अपने कर्तव्यों व उनके निर्वाह का भली प्रकार सम्पादन करना जान व सीख सकते हैं। आइये, उपासना का फल भी जान लेते हैं। उपासना करने से ईश्वर के प्रति निकटता बढ़ती है। उसके सम्पर्क से हमारे दुर्गुण, दु:ख व दुव्यर्सन दूर होते हैं और कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव व पदार्थों की प्राप्ति होती है। आत्मा शुद्ध व पवित्र हो जाती है। ईश्वर व आत्मा का भली प्रकार ज्ञान होता है। इतना ही नहीं अपितु आत्मा का बल इतना बढ़ता है कि पहाड़ के समान दु:ख प्राप्त होने पर भी मनुष्य घबराता नहीं है। क्या यह छोटी बात है? नहीं, यह कोई साधारण या छोटी बात नहीं, अपितु इतनी बड़ी बात है कि इससे अधिक बड़ी कोई बात हो ही नहीं सकती। यह ज्ञान व विश्वास हमें महर्षि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों को पढ़ने व उनका विचार, चिन्तन व मनन करने से होगा।

उपासना की विधि के बारे में जहां तक प्रश्न है, इसकी सर्वोत्तम विधि महर्षि दयानन्द ने 'सन्ध्या' नाम की एक छोटी-सी पुस्तक में लिखी है। इसके दो उदाहरण जानने योग्य हैं। आर्यजगत् के चोटी के विद्वान् पं० युधिष्ठिर मीमांसक महामहोपाध्याय काशी में शास्त्रों के एक मर्मज्ञ विद्वान् पं० देवनारायण तिवारी जी से दर्शनों का अध्ययन करते थे। वह महर्षि दयानन्द के प्रति दूसरों के मिथ्या प्रचार के कारण पूर्वाग्रह रखते थे। पण्डित मीमांसक जी गुरुजी को घंटों उपासना व ध्यान में बैठे हुए देखते थे। एक बार उनके मन में विचार आया कि गुरुजी को स्वामी दयानन्द लिखित सन्ध्या की पुस्तक दिखाकर उस पर उनकी राय पूछी जाये। अत: स्थिति पर विचार कर उन्होंने पुस्तक के बाहर के आवरण को फाड़कर हटा दिया जिससे महर्षि दयानन्द के उस पुस्तक के लेखक होने का ज्ञान गुरु जी को न हो। यह पुस्तक पं० युधिष्ठिर जी ने गुरुजी को इस निवेदन के साथ प्रस्तुत की कि गुरुजी मैं इस पुस्तक के अनुसार सन्ध्या व उपासना करता हूँ। मुझे पता नहीं कि इस पुस्तक के अनुसार सन्ध्या करना ठीक है या नहीं। आप इसे देख लें और मेरा इस विषय में मार्गदर्शन करें। इस घटना के बाद कई दिन बीत गये तो पण्डित युधिष्ठिर जी ने अपने सहपाठी गुरुजी के पुत्र से पूछा कि गुरुजी को उन्होंने जो पुस्तक दी थी, उस पर गुरुजी ने उन्हें कुछ कहा नहीं और उनसे पूछने की उनकी हिम्मत नहीं हो रही है। तब सहपाठी पुत्र ने बताया कि गुरुजी ने अपनी पुरानी पद्धति को छोड़कर आपकी दी हुई पुस्तक के अनुसार सन्ध्या करना आरम्भ कर रखा है। इसके बाद एक दिन मीमांसक जी ने गुरुजी से उस पुस्तक पर उनकी राय पूछी तो गुरुजी ने उसकी प्रशंसा करने के बाद पूछा कि इस

शेष पृष्ठ 6 पर....

thearyasamaj.org

स्वास्थ्य चर्चा–

सूक्ष्म जन्तु और संक्रमण

❑ स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती, मो० : 9416133594

स्वास्थ्य की विपरीत अवस्था को अस्वास्थ्य, रोग या व्याधि कहते हैं।

स्वास्थ्य-जब शरीर के अवयव प्राकृतिक अवस्था में रहते हों और अपने कार्य को अविकृत रूप से भलीभांति सम्पन्न कर रहे हों तथा उन अवयवों के कार्य ग्रस्त होने का हमें ज्ञान तक न हो, एवं कार्य और विश्राम दोनों अवस्थाओं में हम सुख और आनन्द का अनुभव कर रहे हों, शरीर की उस अवस्था को स्वास्थ्य कहते हैं–'**स्वे तिष्ठति इति स्वस्थः**'। अर्थात् जो मनुष्य अपनी प्राकृतिक अवस्था में रहे तथा सु=सुखमय+आस्थ्य=शरीर की अवस्था।

समदोषः समाग्निश्च समधातु-मलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभि-धीयते॥ (सू०सू० अ० 15/41)

जब किसी कारण से ये अवयव विकृत हो जाये ततः उनके अशुभ कर्म से सुख आनन्द भङ्ग हो जाये तो उसे अस्वास्थ्य कहते हैं। रोग के अर्थ भी यही हैं, जो रूजा (पीड़ा) उत्पन्न करे व्याधि (वि=विशेष+आधि=मन या शरीर की व्यथा) जिससे शरीर या मन को दुःख हो।

व्याधि अनेक कारणों से हो सकती है—

(1) शरीर अथवा मन पर आघात से, इसे आगन्तुक व्याधि कहते हैं।

(2) आहार, व्यवहार और आचार के दुष्प्रयोग से अर्थात् इनके मिथ्याहीन या अतिसेवन से।

(3) अनेक वस्तुएं ऐसी हैं, जिनके किञ्चिन्मात्र अधिक सेवन से शरीर में क्लेश उत्पन्न हो जाता है। इनको विष कहते हैं। विष सेवन से जो व्याधि उत्पन्न होती है उसे भी किसी वस्तु विशेष का मिथ्या एवं अनुचित सेवन समझना चाहिए। कुछ वस्तुएं ऐसी हैं जो अत्यल्प मात्रा में औषध रूप में प्रयुक्त होती हैं और कुछ वस्तुएं ऐसी हैं और कुछ वस्तुएं ऐसी हैं जो किसी भी मात्रा में शरीर के लिए अनुकूल नहीं होती। यह विष दो प्रकार के होते हैं।

(क) स्थावर (वनस्पति वर्ग के विष)। (ख) जङ्गम (प्राणि वर्ग के विष)।

स्थावर और प्राणि वर्ग दो श्रेणियों में विभक्त होते हैं।

(1) **स्थूल**-यथा सर्प, वृश्चिक, वर्टक, मूसक, आदि प्राणि वर्ग से मल, रसकपूर, अहिफेन आदि वनस्पति वर्ग से।

(2) **सूक्ष्म**-यह अति सूक्ष्म होते हैं जिनको साधारण नग्न आँखों से नहीं देख सकते, इनको देखने के लिए विशेष अणुवीक्षण यन्त्र की सहायता लेनी पड़ती है। कुछ तो इतने सूक्ष्म होते हैं कि जो अति उत्तम सूक्ष्म दर्शक यन्त्र द्वारा भी नहीं देखे जा सकते। इनका अस्तित्व अन्य साधनों द्वारा यथा संसर्जन आदि द्वारा सिद्ध किया जाता है। इनको रोग के सूक्ष्म अणु अथवा सूक्ष्म जन्तु कहते हैं।

यह जन्तु स्वयं तो हमारे लिए हानिकारक नहीं अर्थात् रोग उत्पन्न नहीं करते किन्तु विष उत्पन्न होता है, जो रोगोत्पत्ति का कारण होता है। विष इन जन्तुओं से दो प्रकार से पैदा होता है। (1) बहिर्गत विष (Exotoxin) जो जीवाणुओं के जीते जी उनमें उत्पन्न होकर अंक शरीर से बाहर निकलता रहता है, अथवा (2) अन्तर्गत विष (Endotoxin) जो इनके शरीर के अन्दर रहता है और उनके मर जाने के पश्चात् उनके शीर्ण और विश्लेषण से उत्पन्न होता है।

इससे स्पष्ट है कि जब तक जन्तु शरीर में प्रवेश न कर पायें तब तक रोग उत्पन्न नहीं होते, इनके प्रवेश को आयुर्वेद अनुसार आगन्तुक व्याधियों में समाविष्ट करते हैं।

क्रमशः अगले अंक में....

विशेष सूचना

आपका शुल्क समाप्त हो गया है।

आर्य प्रतिनिधि साप्ताहिक के सदस्यों से आग्रह है कि जिस माह आपका शुल्क समाप्त हो, कृपया उसी माह में अपना नवीन पंजीकरण शुल्क भेज दें ताकि आपकी सदस्यता समाप्त न हो और आपको आर्य प्रतिनिधि साप्ताहिक पत्रिका लगातार मिलती रहे। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 150/- रु० व आजीवन शुल्क 1500/- रु० मनीआर्डर अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा सम्पादक आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक के पते पर भेजें। -संपादक

इस तरह पढ़ाएं गीता

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

कभी महर्षि दयानन्द पौराणिकों को संदेश देते थे कि पाखण्ड, अंधविश्वास को धर्म से जोड़कर तुम इसाई आदि विदेशी मिशनरियों के आक्षेपों के उत्तर न दे सकोगे। आज वही हो रहा है। पी.के. फिल्म के विरोध जैसे अनेक प्रकरण हैं जहां विरोधियों के आक्षेपों का कोई उत्तर पौराणिकों से देते नहीं बन रहा।

आचार्य अभय आर्य

ऐसे संदर्भों में पक्ष और विपक्ष ऋषि दयानन्द के कृतित्व के औचित्य का उदाहरण देते सुने गये हैं। यज्ञोपरान्त आर्यों द्वारा '**ऋषि दयानन्द की जय हो**' का उद्घोष सार्थक प्रतीत हो रहा है। पौराणिकों को यह तथ्य भी ध्यान में रखना चाहिए कि जब-जब ऋषि दयानन्द द्वारा पौराणिकों के लिए खण्डन पर इसाई आदि विदेशी मिशनरियों ने चुटकी ली तब-तब ऋषि दयानन्द ने इन विदेशी मिशनरियों पर प्रबल प्रत्याक्रमण किया। बाद में भी आर्यों ने इन मिशनरियों की कुचालों से पौराणिकों की रक्षा की। लेकिन कब तक पौराणिक इस ओर आर्यों की ऊर्जा लगवाते रहेंगे? यदि वे अपने वास्तविक सत्य सनातन वैदिक धर्म को पहचाने तो विदेशी मिशनरियों के पास इनके धर्म पर आक्षेप करने का अवसर न रहे और हमारे पास प्रत्याक्रमण का अवकाश ही अवकाश है। पौराणिकों की जिन करतूतों से लोग ईसाइयत व इस्लाम की ओर झुके जब तक उन करतूतों का निदान नहीं होगा तब तक हो-हल्ला के सिवाय इस दिशा में कुछ उपलब्ध नहीं होने वाला।

हाल ही में हरयाणा सरकार के शिक्षामंत्री प्रो० रामबिलास शर्मा ने विद्यालय पाठ्यक्रम में गीता पढ़ाये जाने पर प्रस्ताव रखा है। कितना अच्छा हो यदि इस संदर्भ में श्लोकों के चयन में आर्य विद्वानों का सहाय लिया जाए व आर्य विद्वान् अपने सुझाव शिक्षामंत्री के पास भेजें। '**यदा यदा हि धर्मस्य...**' की व्याख्या सत्यार्थ प्रकाश के सातवें समुल्लास जैसी अन्य कहाँ मिलेगी? इस दिशा में यदि विद्यार्थियों का हित साधना है तो श्लोकों के चयन व व्याख्या का उत्तरदायित्व आर्य विद्वानों पर होना चाहिए वरन् "Johny-Johny .. Yss Pappa" और '**मैया मैं नहीं माखन खायो**' जैसी विषय-वस्तुओं का चयन करके हम बालकों को खेल-खेल में शिक्षा के नाम पर झूठ बोलने की शिक्षा देते रहेंगे।

सन्देश

20-5-1969 ई० को दयानन्दमठ रोहतक में स्वामी नित्यानन्द जी की अध्यक्षता में 46 आर्य प्रतिनिधियों की एक बैठक सम्पन्न हुई जिसमें सर्वसम्मति से आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का गठन किया गया। 14 जून 1969 को रजिस्ट्रार फर्म एवं सोसायटी हरियाणा द्वारा यह सभा रजिस्टर्ड की गई। हरयाणा में आर्यसमाज का विशेष प्रभाव रहा है। हरयाणा के आर्यों का प्रतिनिधित्व करने के कारण आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा ने भी समय-समय पर होने वाले सामाजिक, धार्मिक आन्दोलनों में अपनी सक्रियता से विशिष्ट पहचान बनाई है। शिक्षा के क्षेत्र में भी यह सभा क्रान्तिकारी भूमिका अदा कर रही है। वर्तमान में हरयाणा में सभा की सम्बद्धता में लगभग 22 गुरुकुल, कॉलेज, विद्यालय चल रहे हैं, जिनमें इन्द्रप्रस्थ व कुरुक्षेत्र के ऐतिहासिक गुरुकुल भी सम्मिलित हैं। बड़े हर्ष की बात है कि वर्तमान में गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार का संचालन भी यह सभा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ संयुक्त रूप में कर रही है।

समस्त आर्यों के लिए शुभकामनाओं सहित सूचना है कि सभा को बेबसाइट, ट्वीटर, फेसबुक से जोड़ दिया गया है। आप सबसे विनम्र प्रार्थना है कि अधिक से अधिक लोगों को इन सुविधाओं के माध्यम से सभा से जोड़ने का प्रयास करें। हमारा लक्ष्य 2015 के अन्त तक हरयाणा के प्रत्येक गांव में आर्यसमाज के प्रचार को सक्रियतापूर्ण ढंग से पहुँचाना है। गोशाला संघ हरियाणा व गोरक्षा दल को सभा का पूरा सहयोग है तथा हरयाणा से गोनिकासी, तस्करी व गोहत्या के पूर्ण प्रतिबन्ध के लिए आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा पूर्ण संकल्पित है।

पुनः शुभकामनाओं सहित। **—मा० रामपाल आर्य, सभामन्त्री**

thearyasamaj.org

वेद का स्वाध्याय कर समाज की मुख्यधारा से जुड़ें-के.के. कौल

केन्द्रीय कारागृह-कोटा में वेदों का सेट

कोटा। ईश्वरीय वाणी वेद हमें सकारात्मक सोच देती है। वेद हमें अच्छे विचार देता है, मानवीय गुणों का विकास वेद से होता है। वेद का स्वाध्याय करें, यहां रहकर जीवन में सुधार करें एवं यहां से जाने के बाद समाज की मुख्य धारा से जुड़ें। उक्त विचार मुख्य अतिथि के.के. कौल, पूर्णकालिक निदेशक डी.सी.एम. श्रीराम ने केन्द्रीय कारागृह कोटा में आर्यसमाज जिला सभा कोटा द्वारा आयोजित कार्यक्रम में व्यक्त किये। आर्य समाज जिला सभा के प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना कर समाजसेवा का मूलमंत्र दिया। आर्यसमाज के सुधार कार्यक्रमों से हम सभी क्षेत्रों में अग्रणी हैं। हम सकारात्मक सोच रखें जिससे आपके बुरे विचार स्वतः समाप्त हो जायेंगे एवं आप अच्छा सोचेंगे।

महर्षि दयानन्द वेद प्रचार समिति कोटा के अध्यक्ष अरविन्द पाण्डेय ने कहा कि सभी समस्याओं का समाधान वेद में है। वेद हमें अच्छे कार्य करने की प्रेरणा देता है।

डी.ए.वी. के धर्म शिक्षक शोभाराम आर्य ने गायत्री मंत्र से कार्यक्रम शुभारंभ करते हुए कहा कि हमें कार्य करने से पहले विचार कर लें तो गलती नहीं होती एवं डी.ए.वी. के संगीतज्ञ तुलसीदान सिंह ने प्रभुभक्ति का भजन गाया जिसे सभी कैदियों ने तालियां बजाकर साथ दिया।

इस अवसर पर जेल के पुस्तकालय के वेद अल पुस्तकों का सेट जेल अधीक्षक शंकरसिंह व जेलर नरेन्द्र स्वामी को भेंट किया गया, जिससे यहां शिक्षित कैदी इसका स्वाध्याय करके अपने जीवन को सुधारें व दूसरों के जीवन को भी लाभान्वित करें।

जेल में बंदी महिलाओं को भी के. के. कौल द्वारा आर्य समाज की ओर से गर्म कार्डिगन व उनके बच्चों के लिए भी गरम कपड़े दिये गये। इस अवसर पर जिलामंत्री कैलाश बाहेती, आर्य समाज रेलवे कॉलोनी के प्रधान हरिदत्त शर्मा, आर्यसमाज विज्ञाननगर के प्रधान जे. एस. दुबे, आर्यसमाज तलवण्डी के उपप्रधान श्रीचंद गुप्ता व राजीव आर्य उपस्थित थे। आभार जिलामंत्री कैलाश बाहेती ने किया।

–अरविन्द पाण्डेय
प्रचार सचिव, जिला सभा कोटा

ईश्वर की उपासना क्यों करें.... पृष्ठ 2 का शेष.....

पुस्तक के लेखक कौन हैं? यह बताने पर कि इसके लेखक महर्षि दयानन्द सरस्वती हैं, गुरुजी ने आश्चर्य से कहा कि क्या स्वामी दयानन्द इतने बड़े विद्वान् थे? यह घटना मीमांसक जी ने अपनी आत्मकथा में लिखी है।

इसी प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द जी के साथ हुआ। उनके पिता कट्टर पौराणिक थे और अपनी पति के अनुसार घण्टों नित्य पूजा-पाठ करते थे। एक बार श्रद्धानन्द जी घर से लाहौर चले गये तो घर में रखी सन्ध्या व सत्यार्थ प्रकाश की उनके पुत्र की पुस्तकों को उन्होंने खाली समय में अपने यहां पूजा-पाठ सम्पादित करने वाले पण्डित काशीराम से उनका पाठ करने को कहा। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपनी लेखनी से लिखा है कि पिता जी ने पं० काशीराम को कहा-'पहले इनकी देखभाल कर लो तब सुनाओ, हम निन्दायुक्त नास्तिकपन के ग्रन्थ सुनना नहीं चाहते। पंडित काशीराम जी थे आदमी चतुर, उन्होंने सबसे पहले ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या) का पाठ अर्थ सहित आरम्भ किया। ज्यों-ज्यों पिताजी सुनते उनकी श्रद्धा बढ़ती जाती, तब पंडित काशीराम ने सत्यार्थ प्रकाश का प्रथम समुल्लास सुनाया। पिताजी ने कहा-'पंडित जी हम तो अविद्या में ही पड़े रहे। हमारा मोक्ष कैसे होगा? हमने तो निरर्थक क्रियाएं ही कीं, अब से वैदिक सन्ध्या करेंगे।' बस फिर क्या था, पिताजी ने वेदमन्त्र तथा उनके अर्थ कण्ठ (स्मरण) करना आरम्भ कर दिया। अब वैदिक सन्ध्या और पंचायतन पूजा साथ ही साथ होने लगी।' इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि ईश्वर की उपासना की विधि के लिए महर्षि दयानन्द लिखित पुस्तक 'सन्ध्या' सर्वोत्तम पुस्तक है। यहां एक बात यह भी कह दें कि यदि हम विधिपूर्वक उपासना नहीं करेंगे तो हमारे मृत्यु के बाद होने वाले भावी जन्मों में हमें भारी हानियां उठानी पड़ेंगी जिसका समाधान निकल पायेगा या नहीं, अथवा हम गिरते ही रहेंगे, कहना कठिन है। एक बात और भी कहना समीचीन है कि महर्षि दयानन्द प्रणीत सन्ध्या-उपासना पद्धति के अतिरिक्त अन्य जितनी पद्धतियां प्रचलित हैं उनसे वह लाभ नहीं होता जो योगदर्शन व वैदिक सन्ध्या की विधि से उपासना करने से होता है। निर्णय करना सुविज्ञ पाठकों के हाथ में है। अपना हित व अहित देखकर निर्णय करना उचित है।

आइये, जीवन को पवित्र बनाने और नित्य प्रति ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना सहित पंच महायज्ञों को करने का व्रत लें। यही सत्य-शिवं व सुन्दरम् मार्ग है। इसका करना या न करना आपके अपने हाथों में है।

196 चुक्खूवाला-2, देहरादून

सत्यार्थप्रकाश

समाज में फैले अन्धकार, अन्धविश्वास, गुरुडमवाद, भ्रूणहत्या आदि बुराइयों को मिटाने के लिये सत्यार्थप्रकाश हरयाणा के प्रत्येक घर तक पहुंचाने का यत्न किया जाये। —आचार्य बलदेव

thearyasamaj.org

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस सम्पन्न

आर्यसमाज खलासी लाइन सहारनपुर के प्रांगण में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के उपलक्ष्य में विशेष यज्ञ हुआ। मुख्य यजमान डॉ. राजवीर सिंह वर्मा सपत्नी रहे। यज्ञ सुरेन्द्र कुमार चौहान एवं राजकुमार आर्य जी के संयुक्त पुरोहित्य में हुआ। यज्ञ के उपरान्त आर्यसमाज खलासी लाइन के प्रधान श्री बारूराम शर्मा जी ने कहा कि **हम भारतीय संस्कृति की ओर चलें। वैदिक मार्ग पर लाना ही स्वामी श्रद्धानन्द जी को सच्ची श्रद्धांजलि होगी। उनके बलिदान दिवस के अवसर पर जो भटक चुके हैं उन्हें शुद्धिकरण कर भारतीय संस्कृति की मुख्य धारा में लाना एवं वैदिक मार्ग से लोगों को भविष्य में न भटकने देना और जो किसी कारणवश भटक गये हैं उनका शुद्धिकरण कर पुनः वैदिक मार्ग पर लाना हमारा ध्येय होना चाहिये तभी हम अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द महाराज जी को सच्ची श्रद्धांजलि देंगे।** इस अवसर पर वैदिक भजनोपदेशक श्री बिजेन्द्र आर्य जी ने वातावरण को भक्तिमय करते हुए भजनों के माध्यम से कहा—'कर सके परमात्मा का जाप कर, भूलकर न जिन्दगी में पाप कर। आएगा तुझको नजर परमात्मा आइना दिल को पहले तू साफ कर, भूल से हो जाये कोई पाप तो बैठकर तन्हा में पश्चात्ताप कर, कर सके परमात्मा का जाप पर...।'

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. पूर्णचन्द शास्त्री जी ने की। वैदिक विद्वान् व भूतपूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष जे.वी. जैन डिग्री कॉलेज, डॉ. पूर्णचन्द शास्त्री जी ने अपने प्रवचन में कहा—यह पर्व हमारे जीवन में प्रेरक के रूप में आता है। उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन का विस्तृत विवरण बताया और कहा हमें आज उनके जीवन से प्रेरणा लेने की जरूरत है। बलिदान से प्रेरणा लेकर हम समाज के लिए, राष्ट्र के लिए कुछ करने के लिये सदैव तैयार रहें। अछूतोद्धार के लिये उन्होंने बहुत काम किया। शुद्धिकरण का भी उन्होंने बहुत काम किया। शुद्धिकरण के कारण ही उन्हें जीवन का बलिदान देना पड़ा। तत्पश्चात् डॉ. राजवीर सिंह वर्मा ने मंच संचालन करते हुए कहा—'शुद्धिकरण जो इस समय चल रहा है, ये भी उन्हीं की प्रेरणा से हुआ है।' शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इस दौरान बारूराम शर्मा, राजकुमार आर्य, विजयकुमार गुप्ता, सोमदत्त शर्मा, सुरेन्द्र चौहान, बिजेन्द्र आर्य, सुरेन्द्र कुमार, यशपाल सिंह एडवोकेट आदि रहे।

-सुरेशकुमार सेठी, आय-व्यय निरीक्षक

गुरुकुल कुरुक्षेत्र के पाँच छात्रों ने पुनः एन.डी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर योग्यता का दिया परिचय

अभिजीत

अमन

दीपांशु

ओजस्वी

उज्ज्वल

कुरुक्षेत्र 3 जनवरी, 2015 गुरुकुल कुरुक्षेत्र के पाँच छात्रों ने पुनः एन.डी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर अपनी योग्यता का परिचय दिया है। यह जानकारी गुरुकुल के प्राचार्य डॉ. देवव्रत आचार्य ने दी। उन्होंने बताया कि 28 सितम्बर 2014 में एन.डी.ए.(राष्ट्रीय रक्षा अकादमी) की राष्ट्रीय स्तर पर परीक्षा आयोजित की गई, जिसमें पूरे भारत के लगभग चार लाख परीक्षार्थी परीक्षा में बैठे इस परीक्षा का परिणाम 2 जनवरी 2015 को देर शाम घोषित किया गया। गुरुकुल कुरुक्षेत्र के नॉन मेडिकल के अमन, दीपांशु, ओजस्वी, उज्ज्वल व अभिजीत ने अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाते हुए एन.डी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर गुरुकुल को गौरवान्वित किया है। प्राचार्य ने बताया कि गुरुकुल के छात्रों को अनवरत दो वर्ष तक दक्ष आचार्यों के मार्ग-निर्देशन में एन.डी.ए. का प्रशिक्षण प्रदान किया गया, जिसका यह सकारात्मक प्रतिफल सामने है।

गुरुकुल प्रबन्ध समिति के प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी, प्राचार्य डॉ. देवव्रत आचार्य, शैक्षिक प्रशासक कंवलजीत आर्य व उप प्राचार्य शमशेर सिंह ने इस उपलब्धि के लिए प्रशिक्षण प्रदान करने वाले सभी आचार्यों व परीक्षा में उत्तीर्ण छात्रों को बधाई देकर उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ दीं।

निःशुल्क क्रियात्मक यज्ञ प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

त्रि-दिवसीय (12, 13, 14 दिसम्बर, 2014) निःशुल्क क्रियात्मक यज्ञ प्रशिक्षण शिविर, पुण्डरी (कैथल) हरयाणा दिनांक 14 दिसम्बर 2014 को प्रातः 10.30 बजे सम्पन्न हुआ।

हरयाणा राज्य के पुण्डरी नगर (कैथल) में उपरोक्त शिविर के विशाल पण्डाल में 146 सपत्नीक यजमानों व अन्य यजमानों तथा श्रोतागण की सैकड़ों-सैकड़ों की उपस्थिति में **पूज्य आचार्य ज्ञानेश्वर जी,** एम.कॉम, दर्शनाचार्य (वानप्रस्थ साधक आश्रम आर्यवन, रोजड़, गुजरात) के निर्देशन व ब्रह्मत्व में **पूज्य स्वामी बलेश्वरानन्द जी,** स्वामी ब्रह्मानन्द आश्रम बणी, पुण्डरी के सहयोग व आशीर्वाद से सर्वकल्याण धर्मार्थ न्यास (पंजी.) पानीपत के तत्त्वावधान में परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

पूज्य आचार्य श्री ज्ञानेश्वर जी ने इन द्विनों के दौरान यज्ञ के वास्तविक स्वरूप, लाभ, महत्त्व तथा रहस्यों की वैज्ञानिक विवेचना की तथा सपत्नीक (शिविरार्थियों) को यज्ञ मंत्रों के शुद्ध उच्चारण का अभ्यास भी कराया। यज्ञ को लेकर विशेष शंकाओं का समाधान भी कराया गया। उन्होंने कहा यज्ञ से लोगों में कल्याण की भावना उत्पन्न होती है तथा अच्छे कर्म करने की प्रेरणा भी मिलती है। उन्होंने मानव, परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व के प्रति लोगों के कर्त्तव्यों के पालन पर बल भी दिया। उन्होंने कहा कि वैदिक सभ्यता और संस्कृति ही भारत की सभ्यता और संस्कृति है। वेदमार्ग पर चलने से ही विश्व में शान्ति हो सकती है। उन्होंने कहा कि जब से हमने स्वयं को ईश्वर एवं यज्ञ से अलग कर लिया है, तब से ही अशान्त, दुःखी परेशान, भयभीत आदि हैं। अन्तिम दिन उन्होंने शिविरार्थियों से दक्षिणा रूप में प्रतिदिन/साप्ताहिक यज्ञ करने का संकल्प भी लिया। लगभग 70-80 शिविरार्थियों ने बड़ी श्रद्धा व उत्साह से अपना संकल्प आचार्य प्रवर को दिया।

इस आयोजन को सफल करने में शिविर की धुरी सभी व्यवस्था को संभाल रहे शिविर के संयोजक **राजपाल बहादुर जी** तथा भारत विकास परिषद् फतेहपुर पुण्डरी, आर्यसमाज पुंडरी व अनेक महिलाओं एवं पुरुषों का भरपूर सहयोग रहा। श्री नन्दकिशोर जी शास्त्री के निर्देशन में गुरुकुल कुरुक्षेत्र के 18 ब्रह्मचारियों द्वारा उत्तम प्रकार से यज्ञ व्यवस्था की गई।

मुख्य अतिथि रूप में माननीय प्रो० दिनेश जी कौशिक-विधायक पुण्डरी, श्री अशोक जी अग्रवाल-प्रधान भारतीय विकास परिषद् फतेहपुर पुण्डरी, श्री गौरव वालिया जी सरपंच फतेहपुर, श्री दीवानचन्द आर्य निदेशक वित्त, भारतीय रेल वित्त निगम दिल्ली, श्री जोगीराम जी, श्री रघबीर जी सैनी प्रधान, गुलाब सिंह जी आदि ने पधार कर कार्यक्रम की शोभा को बढ़ाया तथा सभी ने न्यास के इस कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा आर्थिक सहयोग भी किया।

अन्त में शिविर के समापन अवसर पर महात्मा वेदपाल आर्य अध्यक्ष सर्वकल्याण धर्मार्थ न्यास (पंजी.) पानीपत ने तथा शिविर संयोजक श्री राजपाल बहादुर जी प्रवक्ता स्वामी ब्रह्मानन्द आश्रम, बणी पुण्डरी ने परमपिता परमात्मा का विशेष धन्यवाद करते हुए पूज्य स्वामी बलेश्वरानन्द जी, पूज्य आचार्य ज्ञानेश्वर जी, विद्वानों, मुख्य अतिथियों, ब्रह्मचारीगण, यजमानों, श्रोताओं, कार्यकर्त्ताओं, स्वयंसेवकों तथा दानी महानुभावों के प्रति धन्यवाद व आभार प्रकट करते हुए कृज्ञता प्रकट की।

शिविर की विशेषताएँ—(1) 146 हवन कुण्डों पर यजमानों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। (2) इस शिविर में ग्रामीण अंचल के अधिक लोगों ने भाग लिया। (3) शुद्ध गाय का घी व ऋतु अनुकूल सुगन्धित सामग्री का प्रयोग हुआ। (4) पुण्डरी के आसपास चारों ओर इस शिविर की प्रशंसा हो रही है। (5) भविष्य में इस आयोजन की पुनः मांग की जा रही है।

—कमलकान्त आर्य,
संयोजक प्रचार समिति

आवश्यक सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक कार्यालय में आर्य बन्धुओं की सुविधाओं को देखते हुए सभा ने अपना निजी फेसबुक **'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा'** व ट्वीटर अकाउंट **'आर्य प्रतिनिधि सभा'** तैयार किया है जिससे आर्य महानुभावों को भविष्य में काफी सहयोग मिलेगा।

संपर्क सूत्र :- मंजीत-मो० 9812611701 —सभामन्त्री

thearyasamaj.org

न तस्य प्रतिमा अस्ति

❑ स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती, राष्ट्रीय अध्यक्ष, भारतीय संस्कृति रक्षा दल 09729136764

वेद में मूर्तिपूजा का विधान नहीं है। वेद तो घोषणा पूर्वक कहते हैं-**'न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।'** (यजुर्वेद 32-2) अर्थात् जिसका नाम महान् यश वाला है उस परमात्मा की कोई मूर्ति, तुलना, प्रतिकृति, प्रतिनिधि नहीं है। प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस देश में मूर्तिपूजा कब प्रचलित हुई और किसने चलाई ?

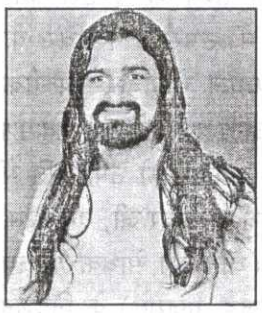

महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में प्रश्नोत्तर रूप में इस सम्बन्ध में लिखते हैं—

प्रश्न-मूर्तिपूजा कहाँ से चली ?

उत्तर-जैनियों से।

प्रश्न-जैनियों ने कहाँ से चलाई ?

उत्तर-अपनी मूर्खता से।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार मूर्तिपूजा बौद्धकाल से प्रचलित हुई। वे लिखते हैं यह एक मनोरंजक विचार है कि मूर्तिपूजा भारत में यूनान से आई। वैदिक धर्म हर प्रकार की मूर्ति तथा प्रतिमा पूजन का विरोधी था। उस समय (वैदिक युग) काल में देवमूर्तियों के किसी प्रकार के मन्दिर नहीं थे। प्रारम्भिक बौद्धधर्म इसका घोर विरोधी था। पीछे स्वयं बुद्ध की मूर्तियां बनने लगी। फारसी और उर्दू में प्रतिमा अथवा मूर्ति के अब भी बुत शब्द का प्रयोग होता है जो बुद्ध का रूपान्तर है। (हिन्दुस्तान की कहानी, पृ० 172) अन्य स्थल पर वे लिखते हैं कि ग्रीस और यूनान आदि देशों में देवताओं की मूर्तियां पूजी जाती थी। वहां से भारत में मूर्तिपूजा आई। बौद्धों ने मूर्तिपूजा आरम्भ की। फिर अन्य जगह फैल गई।

इन उदाहरणों से इतना तो साफ होता है कि मूर्तिपूजा हमारे देश में जैन-बौद्ध काल में आरम्भ हुई। जिस समय भारत में मूर्तिपूजा आरम्भ हुई और लोग मन्दिरों में जाने लगे तो भारतीय विद्वानों ने इसका घोर खण्डन किया।

मूर्तिपूजा खण्डन में उन्होंने यहां तक कह दिया, **'गजैरापीड्यमानोऽपि न गच्छेत् जैनमन्दिरम्।'** अर्थात् यदि हाथी मारने के लिए दौड़ाआता हो और जैनियों के मन्दिर में जाने से प्राणरक्षा होती हो तब भी जैनियों के मन्दिर में नहीं जाना चाहिए। लेकिन ब्राह्मणों, उपदेशकों एवं विद्वानों के कथन का साधारण जनता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उन लोगों ने भी मन्दिरों का निर्माण किया।

यस्यात्मबुद्धि कुणपे त्रिधातुके।
स्वधीः कलत्रादिषु यौन इव्यधीः॥
यत्तीर्थबुद्धि सलिले न कर्हिचिण्।
जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखारः॥
(श्रीमद्भागवत)

अर्थात् जो वात, पित्त और कफ तीन मलों से बने हुए शरीर में आत्मबुद्धि रखता है, जो स्त्री आदि में स्वबुद्धि रखता है, जो पृथ्वी से बनी हुई पाषाण मूर्तियों में पूज्य बुद्धि रखता है, ऐसा व्यक्ति गोखर अर्थात् पशुओं का चारा उठाने वाला गधा है। दर्शनशास्त्रों में भी मूर्तिपूजा का निषेध है—**'न प्रतीके न ही सः'** (वेदान्त दर्शन) प्रतीक में, मूर्ति आदि में परमात्मा की उपासना नहीं हो सकती, क्योंकि प्रतीक परमात्मा नहीं है। संसार के सभी महापुरुषों और समाज सुधारकों ने भी मूर्तिपूजा का खण्डन किया है। श्री शंकराचार्य जी परपूजा में लिखते हैं—

पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वधारस्य चासनम्।
स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं च शुद्धस्यायमनं कुतः॥
निर्लेपस्य कुतो गन्धं पुष्पं निर्वसनस्य च।
निर्गन्धस्य कुतो धूपं स्वप्रकाशस्य दीपकम्॥

अर्थात् ईश्वर सर्वत्र परिपूर्ण है फिर उसका आह्वान कैसा? जो सर्वाधार है उसके लिए आसन कैसा? जो सर्वथा स्वच्छ एवं पवित्र है उसके लिए पाद्य और अर्घ्य कैसा? जो शुद्ध है उसके लिए आचमन कैसा? निर्लेप ईश्वर को चन्दन कैसे लगाया जा सकता है? जो सुगन्ध की इच्छा से रहित है उसे पुष्प क्यों चढ़ाते हो? निर्गन्ध को धूप क्यों जलाते हो? जो स्वयं प्रकाशमान है उसके सामने दीपक क्यों जलाते हो?

आचार्य चाणक्य जी लिखते हैं—"अग्निहोत्र करना द्विजमात्र का कर्त्तव्य है मुनि लोग हृदय में परमात्मा की उपासना करते हैं। अल्पबुद्धि वाले लोग मूर्तिपूजा करते हैं। बुद्धिमानों के लिए तो सर्वत्र परमात्मा है।"

कबीरदास जी कहते हैं—

पत्थर पूजे हरि मिले तो हम पूजे पहार।
ताते तो चाकी भली पीस खाए संसार॥

दादू जी कहते हैं—

मूर्त गढ़ी पाषाण की किया सृजनहार।
दादू सांच सूझे नहीं यूं डूबा संसार॥

गुरुनानक जी का उपदेश—

पाथर ले पूजहि मुगध गंवार।
ओहिया आपि डूबो तुम कहां तारनहार॥

किसी कवि के वचन—

पत्थर को तू भोग लगावे वह क्या भोजन खावे रे।
अन्धे आगे दीपक बाले वृथा तेल जलावे रे।
यह क्या कर रहे हो किधर जा रहे हो?
अंधेरे में क्यों ठोकरें खा रहे हो?
बनाया है जिस को स्वयं अपने हाथों से।
गजब है प्रभु उस को बतला रहे हो।
बुतपरस्तों का है दस्तूर निराला देखो।
खुद तराशा है मगर नाम खुदा रखा है।
सच तो यह है खुदा आखिर खुदा है और बुत है बुत।
सोच! खूद मालूम होगा यह कहाँ और वह कहाँ है?

महर्षि दयानन्द जी का कथन है—"मूर्ति जड़ है उसे ईश्वर मानोगे तो ईश्वर भी जड़ सिद्ध होगा अथवा ईश्वर के समान एक और ईश्वर मानो तो परमात्मा का परमात्मापन भी नहीं रहेगा। यदि कहो कि प्रतिमा में ईश्वर आ जाता है तो ठीक नहीं है इससे ईश्वर की अखण्डता भंग होती है। भावना में भगवान है यह कहो मैं तो कहता हूँ कि काष्ठ खण्ड में इक्षु दण्ड की ओर लोष्ठ में मिश्री की भावना करने से क्या मुख मीठा हो सकता है? मृगतृष्णा में मृग जल की बहुतेरी भावना करता है परन्तु उसकी प्यास नहीं बुझती। विश्वास भावना और कल्पना के साथ सत्य का होना भी जरूरी है।" (दयानन्द प्रकाश)

प्रश्न-मूर्तिपूजा सीढ़ी है मूर्तिपूजा करते-करते मनुष्य ईश्वर तक पहुँच जाता है?

उत्तर-मूर्तिपूजा सीढ़ी नहीं है अपितु गहरी खाई है। सीढ़ी तो गन्तव्य स्थान पर पहुँचने के पश्चात् छूट जाती है। परन्तु हम देखते हैं कि एक व्यक्ति आठ साल की आयु से मूर्तिपूजा आरम्भ करता है और अस्सी वर्ष की अवस्था में मरते समय तक भी इस दलदल से नहीं निकल पाता।

एक बच्चा दूसरी कक्षा में पढ़ता है उसे पाँच और छह का जोड़ करना हो तो वह पहले स्लेट पर पाँच लकीरें खींचता है फिर उसके पास छः लकीरें खींचता है, उन्हें गिनकर वह ग्यारह का जोड़ कर लेता है, परन्तु तीसरी अथवा चौथी कक्षा में पहुँचने पर वह उंगलियों पर गिनने लगता है। पाँचवी और छठी में कक्षा में पहुँचक कर वह मानसिक गणित से ही जोड़ लेता है। यदि मूर्तिपूजा सीढ़ी होती ता मूर्तिपूजक उन्नति करते-करते मन में ध्यान करने लग जाते परन्तु ऐसा नहीं होता।

महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है, "नहीं-नहीं मूर्तिपूजा सीढ़ी नहीं अपितु एक बड़ी खाई है जिसमें गिरकर मनुष्य चकनाचूर हो जाता है। पुनः इस खाई से निकल नहीं सकता किन्तु उसी में मर जाता है।" (सत्यार्थ प्रकाश)

ईश्वर प्राप्ति की सीढ़ी तो महर्षि पतंजलि कृत अष्टांग योग जिसके यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि हैं। विद्वान्, ज्ञानी और योगीजन ईश्वर प्राप्ति की सीढ़ियां हैं, पाषाण आदि नहीं।

भजनोपदेशकों के लिए सभा से सम्पर्क करें—

प्रदेश की सभी आर्यसमाजें अपने आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव या अन्य विशेष कार्यक्रमों के लिए भजनोपदेशकों के प्रोग्राम सुनिश्चित करने के लिए आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक से एक मास पूर्व पत्र द्वारा सम्पर्क करें।

—सभामन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक **मा० रामपाल आर्य** ने आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001 से प्रकाशित। पत्र में प्रकाशित लेखसामग्री से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
प्रत्येक विवाद के लिए न्यायक्षेत्र रोहतक न्यायालय होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जाएगी।